Shri Krishna Stotram

श्रीकृष्णस्तोत्रम्

Document Information

Text title : Krishnastotra from Maheshvaratantra

File name : kRRiShNastotrammAheshvaratantra.itx

Category : vishhnu, krishna

Location : doc_vishhnu

Transliterated by : Yogesh K Sharma yosharma at gmail.com

Proofread by : Yogesh K Sharma yosharma at gmail.com

Translated by : Dr. Sudhakar Palaviya

Description/comments : Maheshwara Tantra paTalaH 47 Verses 1-41

Latest update : April 26, 2019

Send corrections to : sanskrit at cheerful dot c om

This text is prepared by volunteers and is to be used for personal study and research. The file is not to be copied or reposted without permission, for promotion of any website or individuals or for commercial purpose.

Please help to maintain respect for volunteer spirit.

Please note that proofreading is done using Devanagari version and other language/scripts are generated using **sanscript**.

September 17, 2023

sanskritdocuments.org

श्रीकृष्णस्तोत्रम्

पार्वत्युवाच -

भगवन् श्रोतुमिच्छामि यथा कृष्णः प्रसीदति ।
विना जपं विना सेवां विना पूजामपि प्रभो ॥ १॥

पार्वती ने कहा -
हे भगवन ! हे प्रभो ! मैं यह पूँछना चाहती हूँ कि बिना जप,
बिना सेवा तथा बिना पूजाके भी कृष्ण कैसे प्रसन्न होते हैं ? ॥ १ ॥

यथा कृष्णः प्रसन्नः स्यात्तमुपायं वदाधुना ।
अन्यथा देवदेवेश पुरुषार्थो न सिध्यति ॥ २॥

जैसे कृष्ण प्रसन्न होंवे- उस उपाय को अब आप कहिए । नहीं तो,
हे देवदेवेश ! (मानवका मोक्षरूप) पुरुषार्थ नहीं सिद्ध होता
है ॥ २ ॥

शिव उवाच -

साधू पार्वति ते प्रश्नः सावधानतया शृणु! ।
विना जपं विना सेवां विना पूजामपि प्रिये ॥ ३॥

यथा कृष्णः प्रसन्नः स्यात्तमुपायं वदामि ते ।
जपसेवादिकं चापि विना स्तोत्रं न सिध्यति ॥ ४॥

शिव ने कहा -
हे पार्वति ! तुम्हारा प्रश्न बहुत सुन्दर है । अब इसे सावधान
होकर सुनो । बिना जपके, बिना उनकी सेवाके तथा बिना पूजाके भी,
हे प्रिये ! जैसे कृष्ण प्रसन्न होवें उस उपाय को मैं अब कहता
हूँ । जप और सेवा आदि भी बिना स्तोत्रके सिद्ध नहीं होते
हैं ॥ ३-४ ॥

कीर्तिप्रियो हि भगवान्वरात्मा पुरुषोत्तमः ।

जपस्तन्मयतासिद्धै सेवा स्वाचाररूपिणी ॥ ५॥

भगवान परमात्मा पुरुषोत्तम कीर्तिप्रिय (गुणसंकीर्तनसे प्रसन्न होनेवाले) हैं । जप तो भगवानमें तन्मयताकी सिद्धिके लिए होता है और सेवा स्वयंके आचरणके रूपवाली होती है ॥ ५ ॥

स्तुतिः प्रसादनकरी तस्मात्स्तोत्रं वदामि ते ।
सुधाम्भोनिधिमध्यस्थे रत्नद्वीपे मनोहरे ॥ ६॥

नवखण्डात्मके तत्र नवरत्नविभूषिते ।
तन्मध्ये चिन्तयेद्रम्यं मणिगृहमनुत्तमम् ॥ ७॥

भगवान्की स्तुति उन्हें प्रसन्न करनेवाली होती है । अतः उनके स्तोत्र को मैं तुमसे कहता हूँ । सुधा-समुद्रके मध्यमें मनोहर रत्नद्वीप पर नव रत्नसे विभूषित नव खण्डात्मक पीठ है । उस पीठके मध्यमें उत्तमोत्तम एवं रम्य 'मणिगृह'का चिन्तन करना चाहिए ॥ ६-७ ॥

परितो वनमालाभिः ललिताभिः विराजिते ।
तत्र सञ्चिन्तयेच्चारु कुटिटमं सुमनोहरम् ॥ ८॥

चतुःषष्टया मणिस्तम्भैश्चतुर्दिक्ष विराजितम् ।
तव सिंहासने ध्यायेत्कृष्णं कमललोचनम् ॥ ९॥

चारो ओर ललित वनमालाओंसे शोभायमान सिंहासन पर आसीन भगवान् कमललोचन कृष्णका ध्यान करना चाहिए । उस सिंहासनका भी ध्यान करना चाहिए जो सिंहासन सुमनोहर एवं चारू फर्शवाला है और जो चारों ओर दिशाओंमें चौसठ मणिनिर्मित स्तम्भों से जगमगा रहा है ॥ ८-९ ॥

अनर्घ्यरत्नजटितमुकुटोज्वलकुण्डलम् ।
सुस्मितं सुमुखाम्भोजं सखीवृन्दनिषेवितम् ॥ १०॥

स्वामिन्याश्लिष्टबामाङ्गं परमानन्दविग्रहम् ।
एवं ध्यात्वा ततः स्तोत्रं पठेत्सुविजितेन्द्रियः ॥ ११॥

भगवान कृष्णका मुकुट चमचमाता हुआ और कुण्डल अनर्घ्य रत्नों से जटित है । उनका मुखकमल सुन्दर मुस्कानसे युक्त तथा सखी वृन्दसे सेवित है । उनका परमानन्द विग्रह वाम भागमें स्वामिनी

(राधा)से संश्लिष्ट है । उस विग्रहका ध्यान करके जितेन्द्रिय साधक को उनके स्तोत्रका पाठ करना चाहिए ॥ १०-११ ॥

अथ स्तोत्रम् ।

कृष्णं कमलपत्राक्षं सच्चिदानन्दविग्रहम् ।
सखीयुथान्तरचरं प्रणमामि परात्परम् ॥ १२॥

सत्, चित् एवं आनन्दस्वरूप, कमलके पत्रके समान नेत्रोंवाले तथा सखीसमूहमें विचरण करनेवाले परात्पर कृष्ण को मेरा प्रणाम है ॥ १२ ॥

शृङ्गाररसरूपाय परिपूर्णसुखात्मने ।
राजीवारुणनेत्राय कोटिकन्दर्परूपिणे ॥ १३॥

शृंगाररसरूपवाले, परिपूर्ण सुखवाले, लाल कमलके समान अरुण नेत्रवाले तथा कोटिकामदेव स्वरूप कृष्ण को मेरा नमस्कार है ॥ १३ ॥

वेदाद्यगमरूपाय वेदवेद्यस्वरूपिणे ।
अवाङ्मनसविषयनिजलीलाप्रवर्त्तिने ॥ १४॥

वेद आदि आगमरूपवाले, वेदसे ही जाने जानेवाले, अन्तर मनके विषय तथा निज लीलाका स्वयं प्रवर्तन करनेवाले कृष्ण को नमस्कार है ॥ १४ ॥

नमः शुद्धाय पूर्णाय निरस्तगुणवृत्तये ।
अखण्डाय निरंशाय निरावरणरूपिणे ॥ १५॥

शुद्ध, पूर्ण, गुणोंकी वृत्तिसे निरस्त, अखण्ड, निरंश तथा आवरण रहितरूपवाले कृष्ण को नमस्कार है ॥ १५ ॥

संयोगविप्रलम्भाख्यभेदभावमहाब्धये ।
सदंशविश्वरूपाय चिदंशाक्षररूपिणे ॥ १६॥

संयोग एवं विप्रलम्भ नामक शृंगाररसके भेदोंके भाव के महासमुद्र, सत् अंशसे विश्वस्वरूप और चित् अंशसे युक्त अक्षररूपवाले (नित्य) कृष्ण को नमस्कार है ॥ १६ ॥

आनन्दांशस्वरूपाय सच्चिदानन्दरूपिणे ।

मर्यादातीतरूपाय निराधाराय साक्षिणे ॥ १७॥

आनन्दके अंशके स्वरूपवाले, इस प्रकार सत्, चित् तथा आनन्द स्वरूपवाले, मर्यादासे भी अधिकरूपवाले, निराधार एवं (सर्व कार्यके) साक्षी कृष्ण को नमस्कार है ॥ १७ ॥

मायाप्रपञ्चदूराय नीलाचलविहारिणे ।
माणिक्यपुष्परागाद्रिलीलाखेलप्रवर्त्तिने ॥ १८॥

मायाप्रपञ्च (की परिधि)से दूर रहनेवाले, नीलाचल (जगन्नाथ पुरी)में विहार करनेवाले तथा माणिक्य एवं पुष्परागके अद्रि की लीला आदि खेलों को करनेवाले कृष्ण को नमस्कार है ॥ १८ ॥

चिदन्तर्यामिरूपाय ब्रह्मानन्दस्वरूपिणे ।
प्रमाणपथदूराय प्रमाणाग्राह्यरूपिणे ॥ १९॥

चित् रूपसे अन्तरात्मामें रहनेवाले, ब्रह्मानन्द स्वरूप, प्रत्यक्षादि प्रमाणोंसे न जाने जानेवाले, अतः अनुमान आदि प्रमाण पथसे विज्ञेय कृष्ण को नमस्कार है ॥ १९ ॥

मायाकालुष्यहीनाय नमः कृष्णाय शम्भवे ।
क्षरायाक्षररूपाय क्षराक्षरविलक्षणे ॥ २०॥

मायाकी कालिमासे विहीन, कल्याण करनेवाले कृष्ण को नमस्कार हैं । क्षर (अनित्य) और अक्षर (नित्य) स्वरूपवाले तथा क्षर एवं अक्षरसे भी विलक्षण (गुणातीत एवं अनन्त) स्वरूपवाले कृष्ण को नमस्कार है ॥ २० ॥

तुरीयातीतरूपाय नमः पुरुषरूपिणे ।
महाकामस्वरूपाय कामतत्त्वार्थवेदिने ॥ २१॥

तुरीयसे अतीत रूपवाले एवं पुरुष रूपवाले कृष्ण को नमस्कार है । महान काम स्वरूपवाले एवं काम तत्त्वके अर्थके ज्ञाता कृष्ण को नमस्कार है ॥ २१ ॥

दशलीलाविहाराय सप्ततीर्थविहारिणे ।
विहाररसपूर्णाय नमस्तुभ्यं कृपानिधे ॥ २२॥

दशावताररूप लीलामें विहार करनेवाले तथा (मथुराके जमुना,

जन्मभूमि व्रज आदि) सप्ततीर्थोंमें विचरण करनेवाले, (लीला) विहारके रससे पूर्ण और तुम कृपाके निधान कृष्ण को नमस्कार है ॥ २२ ॥

विरहानलसन्तप्त भक्तचित्तोदयाय च ।
आविष्कृतनिजानन्दविफलीकृतमुक्तये ॥ २३॥

(कृष्णके) विरहकी अग्निसे संतप्त तथा भक्तके चित्तमें प्राणका संचार करनेवाले और अपने मुक्ति को विफल करनेके लिए आनन्द को स्वयं प्रकट करनेवाले कृष्ण को नमस्कार है ॥ २३ ॥

द्वैताद्वैत महामोहतमःपटलपाटिने ।
जगदुत्पत्तिविलय साक्षिणेऽविकृताय च ॥ २४॥

(माया एवं ब्रह्मरूप से) द्वैत तथा (ब्रह्मरूप से) अद्वैत रूपसे महा मोहके अन्धकार पटल को समाप्त कर देनेवाले, जगत्की उत्पत्ति और उसके विलयके साक्षी एवं अविकृत कृष्ण को नमस्कार है ॥ २४ ॥

ईश्वराय निरीशाय निरस्ताखिलकर्मणे ।
संसारध्वान्तसूर्याय पूतनाप्राणहारिणे ॥ २५॥

ईश्वर, ईशविहीन, समस्त कर्मसे रहित, संसारके अन्धकार को नष्ट करनेके लिए सूर्यरूप तथा पूतनाके प्राणका हरण कर लेनेवाले कृष्ण को नमस्कार है ॥ २५ ॥

रासलीलाविलासोर्मिपूरिताक्षरचेतसे ।
स्वामिनीनयनाम्भोजभावभेदकवेदिने ॥ २६॥

रास लीलाके विलासरूप समुद्रकी लहरसे पूरित होकर भी अक्षर चित्तवाले, स्वामिनी राधाके नयन कमलकी भावभङ्गिमाके एक मात्र ज्ञाता कृष्ण को नमस्कार है ॥ २६ ॥

केवलानन्दरूपाय नमः कृष्णाय वेधसे ।
स्वामिनीहृदयानन्दकन्दलाय तदात्मने ॥ २७॥

मात्र मानन्दरूपवाले सृष्टि कर्ता तथा स्वामिनी राधाके हृदयानन्दके दाता एवं तद्रूप कृष्णके लिए नमस्कार है ॥ २७ ॥

संसारारण्यवीथीषु परिभ्रान्तात्मनेकधा ।
पाहि मां कृपया नाथ त्वद्वियोगाधिदुःखिताम् ॥ २८॥

संसाररूपी अरण्यकी गलियोंमें अनेकरूपसे विचरण करनेवाले एवं आपके वियोगसे दुखित, हे नाथ ! आप कृपया मेरी रक्षा कीजिए ॥ २८ ॥

त्वमेव मातृपित्रादिबन्धुवर्गादयश्च ये ।
विद्या वित्तं कुलं शील त्वत्तो मे नास्ति किञ्चन ॥ २९॥

हे कृष्ण ! आप ही मेरे माता-पिता, बन्धु-बान्धव आदि सभी कुछ हैं । विद्या, धन-सम्पत्ति, कुल एवं शील आदि गुण आप ही हैं । आपको छोड़कर मेरा इस संसारमें कुछ भी नहीं है ॥ २९ ॥

यथा दारुमयी योषिच्चेष्टते शिल्पिशिक्षया ।
अस्वतन्त्रा त्वया नाथ तथाहं विचरामि भोः ॥ ३०॥

जैसे लकड़ीकी बनी हुई नारी-कठपुतलीकी भाँति जैसे-जैसे डोरी से उसे चलाया जाय चलती रहती है उसी तरह मैं भी हे नाथ ! आपके आश्रित हूँ आप जैसे मुझे प्रेरित करते हैं मैं वैसे ही विचरण करता हूँ ॥ ३० ॥

सर्वसाधनहीनां मां धर्माचारपराङ्मुखाम् ।
पतितां भवपाथोधौ परित्रातुं त्वमर्हसि ॥ ३१॥

हे स्वामि ! मैं सभी साधनोंसे हीन हूँ तथा मैं तो धर्माचरण से भी विमुख हूँ । अतः इस संसार समुद्रसे उद्धार करनेमें आप ही समर्थ हैं ॥ ३१ ॥

मायाभ्रमणयन्त्रस्थामूर्ध्वाधोभयविह्वलम् ।
अदृष्टनिजसकेतां पाहि नाथ दयानिधे ॥ ३२॥

हे स्वामि । हे दयानिधान ! माया मोहमें फंसे रहनेसे व्याकुल, यन्त्रस्थके समान ऊपर नीचे दोनों ओर घूमनेवाले तथा भय से व्याकुल मुझ निरुद्देश्य चक्कर काटनेवालेकी रक्षा कीजिए ॥ ३२ ॥

अनर्थैऽर्थदृशं मूढां विश्वस्तां भयदस्थले ।
जागृतव्ये शयानां मामुद्धरस्व दयापरः ॥ ३३॥

अनर्थ परम्परामें ही दृष्टिपात करनेवाले मूढ और भयदायी
विषयोंमें ही विश्वास रखनेवाले और जागनेवालोंमें सोनेवाले
मेरा, हे दयावान प्रभु ! उद्धार कीजिए ॥ ३३ ॥

अतीतानागत भवसन्तानविवशान्तराम् ।
बिभेमि विमुखी भूय त्वत्तः कमललोचन ॥ ३४॥

हे कमलनयन ! मैं अतीत एवं अनागत (भूत एवं भविष्य)में
होनेवाली दुःखपरम्परामें पड़कर विवश हुआ मैं आपसे विमुख
होकर भयग्रस्त हूँ ॥ ३४ ॥

मायालवणपाथोधिपयःपानरतां हि माम् ।
त्वत्सान्निध्यसुधासिन्धुसामीप्य नय माऽचिरम् ॥ ३५॥

क्योंकि मैं मायारूपी नमकीन समुद्रके पानी को पीनेमें संलग्न
हूँ । अतः हे कृष्ण ! आप अपने सन्निध्यरूपी सुधा समुद्रके
समीप मुझे शीघ्र ही खींच लाइए ॥ ३५ ॥

त्वद्वियोगार्तिमासाद्य यज्जीवामीति लज्जयः ।
दर्शयिष्ये कथ नाथ मुखमेतद्विडम्बनम् ॥ ३६॥

आपके विरहरूप विपत्तिमें पड़ा हुआ मैं जो लज्जासे जीवित हूँ
उस विवर्ण मुख को, हे नाथ ! मैं आपको कैसे दिखाऊंगा ? यही
विडम्बना है । अतः आप स्वयं मुझे खींच लीजिए ॥ ३६ ॥

प्राणनाथ वियोगेऽपि करोमि प्राणधारम् ।
अनौचिती महत्येषा किं न लज्जयतीह माम् ॥ ३७॥

हे प्राणनाथ । वियोगमें भी मैं प्राण धारण कर रहा हूँ- यह
क्या महान अनौचित्य क्या नहीं है? मुझे तो आपके वियोगमें प्राणत्याग
कर देना ही उचित था । यह मुझे लज्जा नहीं प्रदान कर
रहा है ? ॥ ३७ ॥

किं करोमि क्व गच्छामि कस्याग्रे प्रवदाम्यहम् ।
उत्पद्यन्ते विलीयन्ते वृत्तयोब्धो यथोर्मयः ॥ ३८॥

मैं क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? किसके समक्ष मैं अपनी विपदा को
कहूँ ? इस प्रकार विचार समुद्रमें मेरे विचार लहरोंके समान
ऊपर उठते हैं और पुनः उसीमें विलीन हो जाते हैं ॥ ३८ ॥

अहं दुःखाकुली दीना दुःखहा न भवत्परः ।
विज्ञाय प्राणनाथेदं यथेच्छसि तथा कुरु ॥ ३९॥

मैं दुःख परम्परासे पीड़ित हूँ, दीन हूँ, दुःखका मारा हुआ हूँ तथा आपके परायण भी नहीं हूँ- यह सब जानकर, हे प्राणनाथ ! आप जो चाहें वही करें ॥ ३९ ॥

ततश्च प्रणमेत्कृष्णं भूयो भूयः कृताञ्जलिः ।
इत्येतद्गुह्यमाख्यातं न वक्तव्यं गिरीन्द्रजे ॥ ४०॥

इसके बाद हाथ जोड़कर श्रीकृष्णके समक्ष बारम्बार प्रणाम करे । हे गिरिराज हिमालयकी पुत्रि ! यह रहस्य मैंने आपसे बता दिया है । इसे किसी (अपात्र) को कभी नहीं बताना चाहिए ॥ ४० ॥

एवं यः स्तोति देवेशि त्रिकालं विजितेन्द्रियः ।
आविर्भवति तच्चित्ते प्रेमरूपी स्वयं प्रभुः ॥ ४१॥

हे देवेशि ! इस प्रकार जो जितेन्द्रिय साधक त्रिकालमें भगवान् चिदानन्दधन परात्पर परब्रह्म श्रीकृष्णकी स्तुति करता है, उसके (निर्मल) चित्तमें प्रेमरूपी प्रभु स्वयं आविर्भूत हो जाते हैं ॥ ४१ ॥

इति माहेश्वरतन्त्रे उत्तरखण्डे एवं ज्नानखण्डे शिवोमासंवादे सप्तचत्वारिंशपटलं श्रीकृष्णस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

Patala 47 Verse 1 through 41

Encoded and proofread by Yogesh K Sharma yosharma at gmail.com

Shri Krishna Stotram
pdf was typeset on September 17, 2023

Please send corrections to *sanskrit@cheerful.com*